एक बिस्कुट ने ब्रांड का नाम ही नहीं, देश की 'आत्मा' को भी बचाया

Goodbye 2020: जब एक बिस्कुट ने ब्रांड का नाम ही नहीं, देश की 'आत्मा' को भी बचाया
"किसने बचाया मेरी आत्मा को " ? हिन्दी की एक मशहूर कविता इस कठिन सवाल से शुरू होती है। आगे कवि अपना जवाब लिखता है : दो कौड़ी की मोमबत्तियों की रोशनी ने, दो-चार उबले हुए आलू ने बचाया, सूखे पत्तों की आग और मिट्टी के बर्तनों ने बचाया… !

कोरोना काल के लॉकडाउन में अपनी आत्मा को बचाये रखने का यह कठिन सवाल मुंबई, दिल्ली, चेन्नई, हैदराबाद, पुणे और बंगलुरु जैसे शहरों की झुग्गी-झोपड़ियों में रहने वाले लाखों आप्रवासी मजदूरों के सामने भी था। और, कवि आलोकधन्वा अगर आज आत्मा को बचाने जैसे यक्ष-प्रश्न से शुरु होती कविता लिखते तो शायद यह भी जोड़ते कि दो पहियों से पूरी धरती नापने का संकल्प लिए चलती साइकिल और एक अदद बिस्कुट ने बचाया मेरी आत्मा को !

पानी में घुलकर दूध बनता बिस्किट

जी हां !आपने बिल्कुल दुरुस्त पढ़ा- इस साल एक खास बिस्कुट के पॉकेट ने कोरोना-काल के भारत में भूख से आतुर लाखों लोगों की आत्मा को बचाया !इस साल की कोई कहानी कोरोना-काल के कठोर लॉकडाउन को याद किये बगैर नहीं लिखी जा सकती और लॉकडाऊन की कोई भी कहानी अधूरी रहेगी अगर उसमें जीविका गंवाकर बदहाली में अपनी-अपनी साइकिल पर घर-परिवार को लादे परदेस से अपने-अपने "देस" लौटते लाखो-लाख आप्रवासी मजदूरों का जिक्र ना हो। और, जब देस लौटते इन आप्रवासी मजदूरों का जिक्र आयेगा तो तीन और पांच रुपये में मिलने वाले नन्हें बालक का चेहरा समेटे उस ननमुन से पारले-जी बिस्कुट के पैकेट का जिक्र भी बरबस आयेगा।

याद कीजिए देस लौटते आप्रवासी मजदूरों की बदहाली को बयान करते वे हजारो-हजार वीडियोज् जो सोशल मीडिया पर छाये थे। ऐसे ही एक वीडियो में इन पंक्तियों के लेखक ने एक मां को कहते सुना, "इस बियाबान में दूध कहां से मिलेगा। फैक्ट्री के बंद हो जाने से पगार मिली नहीं। जो बचाकर रखे थे, वे इस इंतजार में दाना-पानी जुटाने में खर्च हो गये कि पाबंदी हटेगी तो फैक्ट्री में फिर से काम शुरु होगा और हमारे दिन बहुरेंगे। लेकिन, पाबंदी बढ़ती गई तो हमने गांव लौटने का फैसला लिया। अब रास्ते में इस बिस्कुट का ही सहारा है। पानी में मिलाकर बच्चे को यही खिला देती हूं।' पारले-जी का 3 रुपये

वाला पैकेट तब नवजात शिशुओं के लिए दूध बन गया था, तपती धूप में चलने को मजबूर 8-10 साल के बच्चों के लिए वही नाश्ता था, वही दोपहर का भोजन और रात गहराने से पहले रुकने के लिए कोई सुरक्षित ठांव खोजने की फिक्र के बीच जी को बहलाये रखने के लिए दांतों के बीच कुट-कुट बजता एक मात्र फुसलावन !

बिक्री का कीर्तिमान !

जहां तक पारले-जी बिस्किट की बिक्री का सवाल है, बस साल भर के अरसे में जैसे चमत्कार हुआ उसके लिए। 90 साल पुरानी कंपनी "पारले प्रॉडक्टस" का "वर्ल्डस् लार्जेस्ट सेलिंग बिस्किट्स" की दावेदारी वाला यह उत्पाद 2019 के अगस्त तक बिक्री के मामले में संकट में आ चुका था। बाजार की नब्ज टटोलने वाले अखबार समाचार दे रहे थे कि पारले प्रॉडक्टस् प्राइवेट लिमिटेड के इस हरदिल अजीज उत्पाद की मांग अर्थव्यवस्था की सुस्ती के बीच गंवई इलाकों में घटी है। उस समय कार से लेकर कपड़े तक सारी चीजों की मांग घट रही थी और इंडस्ट्री इंतजार में थी कि सरकार मंद पड़ती मांग में तेजी लाने के लिए राहत का कोई पैकेज लेकर आये तो आर्थिक-वृद्धि का धीमा होता पहिया फिर से गति पकड़े।

अर्थव्यवस्था की सुस्त रफ्तारी का असर पारले-जी की बिक्री पर भी पड़ा। बिस्किट का उत्पादन घटाना पड़ा। साल 1980 और 1980 के दशक में देश के ज्यादातर घरों के बड़े-बूढ़े, बच्चों की जबान पर चढ़ चुका यह बिस्किट साल 2003 तक बिक्री की फेहरिश्त में इस ऊंचाई तक आ चुका था कि कंपनी इसके बारे में दुनिया का सबसे ज्यादा बिकने वाला बिस्किट जैसी गर्वोक्ति कर सके। सो, अपने प्रमुख उत्पाद की मांग का घटना 1 लाख कामगार और 125 से ज्यादा मैन्युफैक्चरिंग प्लांटस् वाली कंपनी के लिए तिरते हुए जहाज में अचानक बड़ा छेद हो जाने जैसा झटका था।

कंपनी के एक अधिकारी ने मीडिया से साफ शब्दों में कहा, हालत इतनी खस्ता हो चुकी है कि सरकार अगर तुरंत हस्तक्षेप नहीं करती तो हमें 8000-10000 कामगारों को नौकरी से हटाना पड़ जायेगा। अधिकारी का इशारा जीएसटी वाली नई व्यवस्था में बिस्किट पर लगे ऊंचे टैक्स से था। कंपनी को लागत में कटौती के लिए प्रति पैकेट बिस्किट की संख्या घटानी पड़ी थी और उसे आभास हो चला था कि अपनी कम आमदनी के बीच पाई-पाई से उसकी कीमत वसूलने की आदत वाले भारत के ग्रामीण समुदाय को पारले-जी के पैकेटस् में बिस्किटों की तादाद का घटना रास नहीं आया है।

ग्रामीण अंचलों में उत्पाद की मांग का घटना पारले प्रॉडक्टस् की सेहत के लिए संगीन मामला था। लगभग 1.4 बिलियन डॉलर सालाना की रेवेन्यू वाली पारले प्रॉडक्टस् की आमदनी का 50 प्रतिशत भारत के ग्रामीण अंचलों से आता है और एक मानीखेज बात यह भी है कि दो-तिहाई भारत अब भी गांवों में बसता है। कंपनी ने ऊंचे टैक्स से जुड़ी अपनी समस्या की चर्चा तब जीएसटी काउंसिल से की थी और इससे पहले पूर्व वित्तमंत्री अरुण जेटली से भी कहा था कि बिस्किटस पर लगे ऊंचे टैक्स के बारे में फिर से विचार किया जाये।

कंपनी को भले मामला जीएसटी से जुड़ा लग रहा हो लेकिन पारले-जी की घटती मांग की व्याख्या में उस वक्त यह भी लिखा जा रहा था कि दरअसल कंपनी बाजार की बदलती प्रवृत्ति के हिसाब से अपने

को बदल नहीं पा रही। कंपनी ये बात पहचान नहीं पा रही कि गरीबों की तादाद में कमी आयी है, देश में नया-नया समृद्ध हुआ एक महत्वाकांक्षी तबका तैयार हुआ है जो कुकीज, चिप्स और वैफर्स खाता है। साथ ही, लोग पहले से ज्यादा हेल्थ कांशस हुए हैं और दूध-ग्लूकोज से भरे-पूरे होने की दावेदारी करने वाले पारले-जी पर अब उनकी आंखें उस तरह नहीं अटकती जितना कि 1980-1990 के दशक में अटका करती थीं।

लेकिन कोरोना काल की पाबंदी के दौर में पारले-जी की बिक्री के गिरते ग्राफ ने एकबारगी छलांग लगायी। जून माह के पहले पखवाड़े में अखबारो में इस आशय की सुर्खियां लगीं और टीवी चैनलों से खास खबर दिखायी कि पारले प्राडक्टस् ने लॉकडाऊन वाले अप्रैल और मई के महीने में अपने प्रमुख उत्पाद पारले-जी की रिकार्ड बिक्री की है और कंपनी का मार्केट शेयर तेज प्रतिस्पर्धा वाले बिस्किटस् के बाजार में 5 प्रतिशत तक जा पहुंचा है।

सौ वजहों की एक वजह

पारले-जी की बिक्री में हुई रिकार्ड बढ़त के साथ बाजार में इस प्रॉडक्ट के परफॉर्मेंस को लेकर व्याख्याएं भी बदलीं। कहा गया कि लॉकडाउन के दौरान लोगों के घरों में रहने का समय ज्यादा बढ़ गया। सो, मनबहलाव के लिए लोग खाने-पीने की किसिम-किसिम की चीजों पर चोट मारते थे। और, लोगों का जोर इस बात पर भी था कि खाने-पीने की ढेर सारी चीजें भरपूर मात्रा में एक बार ही खरीद लें ताकि लॉकडाऊन में बार-बार घर से निकलने की जहमत से बचे रहें। सो, खाने-पीने की जरुरी चीजों की घरेलू जमाखोरी के इस चलन में पारले-जी बिस्किटस् की खरीदारी भी बढ़ी।

पारले-जी की बिक्री की बढ़त की व्याख्या में इस्तेमाल इसी तर्क का एक संशोधित रूप ये भी था कि लॉकडाउन के लंबा खींचने से लोगों में आशंका गहरी होती गई। उन्हें चिन्ता ने घेरा कि घर की रसोई के लिए जरुरत भर का भंडार कहीं घट तो नहीं जायेगा, उत्पादन के ठप्प होने से चीजों की कीमतें कहीं बहुत ज्यादा बढ़ तो नहीं जायेंगी। सो, घबराहट में उन्होंने खाने-पीने के चीजों की खरीदारी वास्तविक जरुरत से कहीं ज्यादा की। पारले-जी बिस्किटस् की खरीद में हुई बिक्री भी लोगों में व्याप्त इसी घबराहट का पता देती है।

लेकिन असल वजह लोगों की घबराहट भरी खरीदारी में नहीं कहीं और है। लॉकडाऊन किश्तों में बढ़ता गया और इसी के साथ फैक्ट्रियों, दुकानों और बाजारों के खुलने पर लगी पाबंदी भी बढ़ती गई। दिहाड़ी या फिर छोटी-छोटी अवधि के अनुबंध पर काम करने वाले कामगारों ने जीविका गंवायी, उनकी आमदनी का एकमात्र स्रोत जाता रहा। ऐसे में उपाय यही था कि वे उन जगहों को लौट जायें जहां से वे आये हैं। बंदी के उस दौर में साइकिल, टैम्पो, ट्रक, रिक्शा , बैलगाड़ी, ठेलागाड़ी और जो ये नहीं तो पैदल ही सही, कोई भी जतन करके मजदूर अपने घरों को चल पड़े। हजारों किलोमीटर की इस बेसहारा यात्रा में उन्हें भूख मिटाने का सबसे सस्ता और आसान तरीका पारले-जी के पैकेटस् के रुप में नजर आया।

इसी से जुड़ी दूसरी वजह रही पारले-जी की थोक खरीदारी। यह खरीदारी स्वयंसेवी संगठनों, दान-धरम की संस्थाओं और दूसरे के दुख को अपना दुख मानने वाले ढेर सारे दर्दमंद लोगों ने की। इरादा पारले-जी

बिस्किटस् को बेहाल-बदहाल लोगों के बीच बांटने का था। राह चलते लोगों को एक जगह बैठाकर भोजन कराना ना तो हर जगह मुमकिन था और ना ही सबके लिए संभव। ऐसे में पारले-जी का पैकेट लेने वाले और देने वाले दोनों ही के लिए एक सुभीते का सामान था। पारले प्राडक्टस् ने इस चलन को पहचाना। मई महीने के आखिरी हफ्ते में ये खबर आ चुकी थी कि कंपनी अगले तीन हफ्ते में कुल तीन करोड़ बिस्किटस् के पैकेटस् सरकारी एजेंसियों के माध्यम से जरुरतमंद लोगों के बीच बांटेगी।

कोई शक नहीं कि मानवता के हक में कंपनी ने अपने हिस्से का फर्ज निभाया लेकिन पारले-जी की बिक्री में हुई बढ़त की व्याख्याओं से यह स्याह सच भी उभरता है कि इकॉनॉमी की ग्रोथ-स्टोरी में भारत के जिस ग्रेट एस्पिरेशनल क्लास की भूमिका को लेकर इतना हल्ला है, वह भीतर से बड़ा कमजोर है-इतना कमजोर कि चंद रोज को भी रोजगार छिन जाये तो इस एस्पिरेशनल क्लास के सामने भूखों मरने की नौबत आ जाये।

यह कोरोना-काल में चले लंगरों मे दिखा, सरकारी की मुफ्त राशन बांटने की पहलकदमी में दिखा, पारले-जी की बिक्री में दिखा और एकदम अभी के लम्हे में ग्लोबल हंगर इंडेक्स रिपोर्ट (2020) में भी दिख रहा है। जी हां, भुखमरी की दशा के लिहाज से 107 देशों की सूची में भारत 94वें स्थान पर है यानि पाकिस्तान, बांग्लादेश और नेपाल से भी ज्यादा गयी-गुजरी हालत में !

(लेखक सामाजिक और सांस्कृतिक स्कॉलर हैं)

moneycontrolhindi/ से साभार